Subject:- History Subsidiary

Degree Part I (Sub)

Lecture No- 39

Dr. Hem Narayan Mahto
Deptt of History
9835007357

Date:- 8.5.2020

Ques:- महावीर के जीवन-चरित्र एवं उनकी शिक्षाओं का वर्णन कीजिए।

Ans:- जैन धर्म के 24वें तीर्थंकर और मुख्य प्रवर्तक महावीर स्वामी थे। उनका वास्तविक नाम वर्द्धमान था। उनका जन्म (540 ई०पू०) वैशाली के निकट कुण्डग्राम में हुआ था। उनके पिता सिद्धार्थ ज्ञातृक कुल के गणराजा थे; जो वज्जिसंघ का एक घटक था। उनकी माता का नाम त्रिशला था, जो लिच्छवि गणराज्य के प्रधान चेटक की पुत्री थी। वर्द्धमान के जन्म के अवसर पर देवताओं ने भविष्यवाणी की थी कि यह बालक आगे चलकर एक चक्रवर्ती राजा होगा या ज्ञानी पुरुष। वर्द्धमान ज्ञानी पुरुष ही बने।

वर्द्धमान का बचपन और युवावस्था सुख, शांति एवं संपन्नता का था। एक राजकुमार को जो सुविधाएँ उपलब्ध हो सकती थी, वर्द्धमान को भी उपलब्ध थी। उन्हें राजोचित विधाओं की शिक्षा दी गई। युवावस्था में ही उनका विवाह एक परम सुंदर राजकुमारी यशोदा के साथ हुआ। यशोदा ने उन्हें प्रियदर्शना नाम की पुत्री का पिता भी बनाया। इस समय तक सांसारिक और गृहस्थ का जीवन व्यतीत करने के बावजूद वर्द्धमान का चिंतनशील स्वभाव शांत नहीं था। वे संसार की अवस्था से दुःखी थे और इससे मुक्ति पाने का रास्ता खोज रहे थे। 30 वर्ष की अवस्था में अपने पिता की मृत्यु के पश्चात अपने बड़े भाई नन्दिवर्द्धन की अनुमति प्राप्त कर वे गृहत्यागी और संन्यासी बन गए।

Scanned with CamScanner

निर्ग्रंथ भिक्षु के वेश में वे कुछ दिनों तक भ्रमण करते रहे। कल्पसूत्र उनके जीवन पर प्रकाश डालता है। इस ग्रंथ के अनुसार गृहत्याग के 11 महीनों बाद उन्होंने वस्त्र पहनना भी छोड़ दिया। ज्ञान की प्राप्ति के लिए उन्होंने 12 वर्षों तक कठोर तपस्या की। उनके मार्ग में अनेक बाधाएं आईं। उन्हें मार एवं गालियाँ खानी पड़ीं, लोगों का उपहास सहना पड़ा, फिर भी वे अपने पथ से विचलित नहीं हुए। सभी कष्टों को सहते हुए, सभी बंधनों से अपना संबंध तोड़ते हुए वे अपनी तपस्या में लीन रहे। इस कठिन तपस्या के पश्चात जृम्भिकग्राम (जृम्भिका ग्राम) के निकट ऋजुपालिका नदी के तट पर एक शाल वृक्ष के नीचे उन्हें कैवल्य (कैवल्य या पूर्ण ज्ञान) की प्राप्ति हुई। फलतः वे केवलिन या केवली के नाम से भी जाने गए। सभी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने के कारण उन्हें जिन (विजेता) भी कहा गया। इसी प्रकार, अतुल पराक्रम दिखाने के कारण वे महावीर कहलाए।

ज्ञान प्राप्ति के पश्चात महावीर अपने विचारों के प्रचार के लिए निकल पड़े। वे सिर्फ बरसात छोड़कर हमेशा भ्रमण ही करते रहते थे। चंपा, वैशाली, राजगृह आदि नगरों में घूम-घूम कर उन्होंने अपने धर्म का प्रचार किया। इस कार्य में उन्हें राजपरिवार से संबद्ध होने के कारण लाभ हुआ। वैशाली के शासक चेटक, अवन्ती के राजा प्रद्योत एवं उनकी रानियाँ, बिम्बिसार और उनकी रानियाँ, कौशांबी और सिंधु सौवीर के राजाओं, वैशाली गणराज्य और मल्लों ने वर्धमान महावीर के धर्म को अपनाया। शीघ्र ही महावीर के अनुयायियों, जो जैन कहलाते थे, की संख्या बहुत बड़ी हो गई। अनेक विरोधों के बावजूद महावीर की लोकप्रियता बढ़ती गई। इसी प्रकार अपने धर्म का प्रचार करते हुए 72 वर्ष की अवस्था में पावापुरी (जिला नालंदा) में उन्हें निर्वाण की प्राप्ति हुई (468 ई॰पू॰)

<u>महावीर की शिक्षाएं अथवा जैनधर्म के सिद्धांत</u>

महावीर जैन तीर्थंकर परम्परा के 24वें व अंतिम तीर्थंकर थे,

Scanned with CamScanner

महावीर ने जैन धर्म के सिद्धान्तों को सुव्यवस्थित किया तथा जैन संघ की स्थापना की। महावीर ने सत्य का पता लगाने में वेदों के प्रमाण को अस्वीकार किया तथा अर्हतों (तीर्थंकरों) के कैवल्य ज्ञान व उनके वचनों को प्रामाणिक माना। महावीर ने आत्मवादियों व नास्तिकों के एकान्तवादी मतों को त्यागकर एक बीच के मार्ग को अपनाया। जिसको अनेकान्तवाद या स्याद्वाद कहा जाता है। इसके अनुसार सत्य के अनेक पहलू हैं, तथा मनुष्य को परिस्थिति-भेद से उसका आंशिक ज्ञान होता है।

महावीर की प्रमुख शिक्षाएँ अथवा जैन धर्म के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित हैं:-

(1) अनीश्वरवादिता:- जैन धर्म ईश्वर को सृष्टि के रचयिता एवं पालनकर्ता के रूप में स्वीकार नहीं करता। महावीर का विचार था कि प्रत्येक व्यक्ति में अनेक शक्तियाँ गुप्त रूप से निहित होती हैं। यदि व्यक्ति उनका पूर्णरूपेण विकास करे तथा आत्मा की शुद्धि कर ले तो वह स्वयं परमात्मा बन सकता है। जैन धर्म के अनुसार संसार छः द्रव्यों से बना है। ये छः द्रव्य - आकाश, काल, धर्म, अधर्म, पुद्गल व जीव हैं।

(2) आत्मवादिता तथा अनेकात्मवादिता:- जैन धर्म आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करता है। जिस प्रकार ब्राह्मण धर्म में आत्मा को अमर व अनन्त माना जाता है, उसी प्रकार महावीर ने भी आत्मा की अनेकता को स्वीकार किया। महावीर के अनुसार आत्मा स्वभाव से निर्विकार एवं सर्वद्रष्टा है, किन्तु मोह के बन्धन व कर्म जाल उसकी शक्ति को क्षीण कर देते हैं।

(3) निवृत्ति मार्ग:- बौद्ध धर्म के समान जैन धर्म में भी निवृत्ति मार्ग को प्रधानता दी गई है। जैन धर्म के अनुसार संसार दुःखों से परिपूर्ण है। दुःखों से निवृत्ति जैन धर्म का प्रमुख उद्देश्य है। जैन धर्म भी दुःखों का वास्तविक कारण तृष्णा को ही मानता है।

Scanned with CamScanner

(4) कर्म की प्रधानता :- जैन लोग कर्म की प्रधानता को मानते हैं। इन लोगों का विश्वास है कि हमारे पूर्वजन्म के कर्मों से ही इस बात का निर्णय होता है कि किस वेश में हमारा जन्म होगा और कैसा हमारा शरीर होगा। कर्म फल के प्रभाव से ही वह राजा अथवा भंगी के घर जन्म लेता है। इस जन्म में अच्छे कर्म करके मनुष्य अपना भविष्य अच्छा बना लेता है। क्रोध, माया, लोभ आदि के कारण ही आत्मा बन्धन में पड़ती है। जैन धर्म में पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर भी विश्वास किया जाता है।

(5) आत्मा की मुक्ति :- आत्मा को कर्म बन्धन से मुक्त करने के लिए जैन धर्म सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् कर्म रूपी त्रिरत्न को पर्याप्त समझता है, इसलिए सभी मनुष्यों के लिए यह आवश्यक है कि वे संसार के सभी जीवधारियों को समान समझें।

(6) अठारह पाप :- जैन धर्म के अनुसार अठारह पाप हैं। आवश्यक सूत्र के अनुसार वे इस प्रकार हैं - (1) हिंसा (2) झूठ (3) चोरी (4) मैथुन (5) परिग्रह (6) क्रोध (7) मान (8) माया (9) लोभ (10) राग (11) द्वेष (12) कलह (13) दोषारोपण (14) चुगली (15) असंयम में रति और संयम में अरति (16) निन्दा (17) छल कपट और (18) मिथ्या दर्शन

(7) पाँच महाव्रत :- महावीर स्वामी ने स्वयं देखा था कि ब्राह्मण दर्शन के सिद्धान्त साधारण जनता के लिए ग्राह्य नहीं थे, वे सभी तप नहीं कर सकते और न सभी यज्ञ कर सकते हैं। अतः इन्होंने दो प्रकार के धर्म का उपदेश देना आवश्यक समझा - (1) संन्यासियों के लिए तथा (2) गृहस्थ या श्रावकों के लिए महावीर ने सर्वसाधारण के लिए पाँच नियम बताये जिसको पाँच महाव्रत कहते हैं, और जैन धर्म में इनके पालन पर बहुत अधिक जोर दिया गया है, ये पाँच व्रत अहिंसा, सत्य, अस्तेय

अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य है।

जैन धर्म में अहिंसा के पालन पर बड़ा बल दिया जाता है। अहिंसा का केवल यही तात्पर्य नहीं कि किसी की हत्या की जाए। वरन् अहिंसा का वास्तविक तात्पर्य यह है कि न हिंसा की कल्पना करनी चाहिए और न उसके सम्बन्ध में करना चाहिए, न दूसरों को हिंसा करने की आज्ञा देनी चाहिए। और न उन्हें इसके लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसी तरह सत्य पर भी जैन धर्म में बहुत अधिक जोर दिया जाता है।

जैसी लोग अस्तेय, जिसका अर्थ है चोरी न करना, को भी अपना एक महाव्रत मानते हैं। वे दूसरे का धन नहीं लेने का उपदेश देते हैं।

(8) वेदों में अविश्वास :- जैन धर्म वेदों में विश्वास नहीं रखता तथा उन्हें अपौरुषेय नहीं मानता। जैन धर्म ने ब्राह्मण धर्म में व्याप्त कुरीतियों की भी आलोचना की। अहिंसात्मक नीति का पालन करने के कारण जैन धर्म पशु बलि व यज्ञों का घोर विरोधी है।

(9) समानता व सदाचार पर बल :- जैन धर्म वर्ण व्यवस्था को स्वीकार नहीं करता। महावीर स्वामी के अनुसार शूद्र व ब्राह्मण में कोई अन्तर नहीं है। जैन धर्म के अनुसार निर्वाण प्राप्त करने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है चाहे वह शूद्र हो अथवा ब्राह्मण। महावीर ने नारियों को सम्मान देने पर भी बल दिया। इसके अतिरिक्त महावीर ने सदाचारी एवं नैतिक जीवन व्यतीत करने का उपदेश दिया। जैन धर्म के अनुसार सदाचारी व्यक्ति निर्वाण प्राप्त करता है।

(10) गुणव्रत :- जैन धर्म के अन्तर्गत तीन गुणव्रतों का पालन करना अनिवार्य है। ये तीन गुणव्रत निम्नलिखित हैं — (A) दिग्व्रत :- प्रत्येक दिशा में एक निश्चित दूरी

का निर्धारण जिसके आगे भ्रमण को लोग अपने जीवन काल में नहीं जाना चाहिए।

(B) अनर्थदण्ड व्रत:- पाप में वृद्धि करने वाली प्रयोजनहीन वस्तुओं का त्याग।

(C) देश व्रत:- समय के अनुकूल भ्रमण की दूरी में और कमी करना।

(11) तीर्थंकरों की उपासना:- यद्यपि जैन धर्म ईश्वर को नहीं मानते किन्तु वे महापुरुषों की पूजा करना आवश्यक समझते हैं। जैन धर्म में ईश्वर के स्थान पर तीर्थंकरों की आराधना की जाती है क्योंकि ईश्वर के समस्त आवश्यक गुण तीर्थंकरों में निहित थे। अतः प्रेरणा व मार्ग प्रदर्शन के लिए जैन धर्म में तीर्थंकरों की उपासना को आवश्यक समझा जाता है।

जैन धर्म मानवीय भावनाओं से प्रभावित था, तथा उसने लोगों को सात्विक जीवन व्यतीत करने और अहिंसा के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

—

Dr. Hem Narayan Mahto
Associate Professor
Deptt. of History
R.N. College. Pandaul
(Madhubani)

Scanned with CamScanner